

शिक्षा का अधिकार और प्रारंभिक शिक्षा के निजीकरण में वंचितों का सवाल एक नीतिगत समीक्षा

सुधांशु कुमार सिंह*

निःशुल्क और अनिवार्य बाल शिक्षा का अधिकार अधिनियम, 2009 में पारित हुआ। इस अधिकार के तहत धारा 12(1)(c) द्वारा गैर-अनुदानित मान्यता प्राप्त निजी स्कूलों में सामाजिक एवं आर्थिक रूप से कमजोर पृष्ठभूमि के बच्चों के लिए प्रारंभिक कक्षा या नर्सरी अथवा एल.के.जी. में प्रवेश हेतु पच्चीस फ्रीसदी आरक्षित कोटे के प्रावधान को सुनिश्चित किया गया। इस अधिनियम को लागू करने में सरकार को बहुत-सी चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। विद्यालयों को इस नियम का पालन करना चाहिए, ताकि बच्चों को गुणवत्तापूर्ण शिक्षा प्राप्त हो सके।

भारत का एक गणतंत्र राज्य बनने के साथ ही सपना रहा है कि शिक्षा की रोशनी को सभी की पहुँच तक फैलाया जाए। इसी उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए संविधान निर्माताओं ने शिक्षा के अधिकार को अनुच्छेद 45 के भाग (4) में राज्य के नीति निदेशक तत्वों के अंतर्गत शामिल किया। इसमें कहा गया था कि “संविधान लागू होने के 10 वर्ष के भीतर राज्य अपने क्षेत्र के सभी बच्चों को 14 वर्ष की आयु होने तक निःशुल्क व अनिवार्य शिक्षा प्रदान करने का प्रयास करेगा।” इस संवैधानिक उत्तरदायित्व को पूरा करने के लिए अनेक राज्यों में प्राथमिक शिक्षा अधिनियम बनाए गए जिनमें प्राथमिक शिक्षा को अनिवार्य व निःशुल्क बनाने के कार्यक्रमों को क्रियान्वित करने की नीति निर्धारित की गई। लेकिन इस संवैधानिक निर्देश तथा राज्यों द्वारा

पारित अधिनियमों के बावजूद भी प्राथमिक शिक्षा को अनिवार्य और निःशुल्क बनाने के प्रयास पूरे नहीं हो सके हैं (गुप्ता एवं गुप्ता 2012, पृ. 258)।

इस विषम स्थिति को देखकर संविधान के (छियासीवां संशोधन) अधिनियम, 2002 द्वारा तीन बदलाव किए गए जिसमें इस अधिनियम की धारा (2) द्वारा संविधान के खंड 3 में अनुच्छेद 21 (क) को अंतः स्थापित करते हुए कहा गया कि “राज्य 6 वर्ष से 14 वर्ष तक की आयु समूह के सभी बच्चों के लिए निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा देने की ऐसी रीति में, जो राज्य विधि द्वारा अवधारित करें, उपबंध करेगा।” इस संशोधन अधिनियम की धारा (3) द्वारा संविधान के भाग (4) में अनुच्छेद 45 का प्रतिस्थापन करते हुए कहा गया कि अब

* शोधार्थी, शैक्षिक अध्ययनशाला, डॉ. हरीसिंह गौर विश्वविद्यालय, सागर (मध्य प्रदेश) 470 003

अनुच्छेद 45 में “राज्य 6 वर्ष से कम आयु के बच्चों के लिए प्रारंभिक बाल्यावस्था देखरेख और शिक्षा देने के लिए उपबंध करने का प्रयास करेगा।” और इस संशोधन अधिनियम की धारा (4) द्वारा संविधान के अनुच्छेद 51 (क) में खंड (ज) के बाद 51 (क) (ट) को जोड़ा गया जिसमें यह बात कही गयी कि “राज्य के माता-पिता या संरक्षक, 6 वर्ष से 14 वर्ष तक की आयु समूह वाले अपने, यथास्थिति, बच्चों या प्रतिपाल्य के लिए अवसर प्रदान करें।” स्पष्ट है कि सन् 2002 में छियासीवें संशोधन द्वारा संविधान के खंड तीन में अनुच्छेद 21 (क) को जोड़कर 6 से 14 वर्ष तक की आयु वाले सभी बच्चों के लिए शिक्षा को निःशुल्क तथा अनिवार्य करना एक मौलिक अधिकार बना दिया गया लेकिन इस संबंध में विधि का निर्माण नहीं हो सका था (गुप्ता एवं अग्रवाल, 2014, पृ. स. 92-93)।

भारतीय संसद के द्वारा दिनांक 4 अगस्त, 2009 को पारित एवं 27 अगस्त, 2009 को भारत के राजपत्र में प्रकाशित *निःशुल्क तथा अनिवार्य शिक्षा का अधिकार अधिनियम, 2009* के रूप में इसे कानूनी रूप दिया जा सका। वस्तुतः संवैधानिक प्रावधानों एवं शिक्षा का अधिकार अधिनियम, 2009 बच्चों के लिए शिक्षा व्यवस्था करने में केंद्र व राज्य सरकारों के साथ-साथ अभिभावकों व संरक्षकों की भूमिका को रेखांकित करते हैं। (गुप्ता एवं गुप्ता, 2012, पृ. 258)।

निःशुल्क एवं अनिवार्य बाल शिक्षा का अधिकार अधिनियम के अनुसार अब यह केंद्र तथा राज्य के लिए कानूनी बाध्यता है कि सभी को निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा सुलभ हो सके।

यूनेस्को की शिक्षा के लिए वैश्विक मॉनिटरिंग रिपोर्ट 2010 के अनुसार, लगभग 135 देशों ने अपने

संविधान में शिक्षा को अनिवार्य कर दिया है तथा निःशुल्क एवं भेदभाव रहित शिक्षा सभी बच्चों को देने की बात कही गई है। इस अधिनियम के अंतर्गत यह निहित है कि जो सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक, भौगोलिक, भाषायी अथवा लिंग कारकों की वजह से शिक्षा से वंचित हैं, ऐसे बच्चों को इसका सर्वाधिक लाभ मिलेगा। साथ ही यह बात भी अपेक्षित थी कि विद्यालय छोड़ने वाले बच्चों को अब गुणवत्तापूर्ण शिक्षा उपलब्ध होगी। (कुमार, 2013, पृ. 121)।

गैर-अनुदानित सहायता प्राप्त स्कूलों की सोसाइटी राजस्थान बनाम भारत राज्य संघ WP(C) 95 ऑफ़ 2010 का फैसला 12 अप्रैल, 2012 को जब गैर-अनुदानित सहायता प्राप्त स्कूलों की ओर से कहा गया कि निःशुल्क व अनिवार्य शिक्षा प्रदान करना सरकार की ज़िम्मेदारी है इसलिए हमें मजबूर नहीं किया जाना चाहिए कि हम सभी निजी स्कूल सरकार के दायित्व को निभाने में योगदान दें। तब अदालत ने निःशुल्क और अनिवार्य बाल शिक्षा के अधिकार अधिनियम को संवैधानिक रूप से उचित ठहराते हुए कहा कि यह प्रावधान उन सभी पर लागू होगा जो (क) सरकार द्वारा नियंत्रित उसके स्वामित्व में या उसके द्वारा स्थापित स्कूल हैं, (ख) सहायता प्राप्त स्कूल (जिसमें अल्पसंख्यक प्रशासित स्कूल हैं) जिन्हें सरकार या स्थानीय अधिकरण द्वारा आंशिक या पूर्ण रूप से अनुदान या सहायता प्रदान की जा रही हो, (ग) किसी विशेष वर्ग के अधीन स्कूल, (घ) गैर-सहायता प्राप्त गैर-अल्पसंख्यक स्कूल सभी आर्थिक रूप से पिछड़े वर्ग के विद्यार्थियों के लिए 25 प्रतिशत सीटें आरक्षित करेंगे। निःशुल्क एवं अनिवार्य बाल शिक्षा अधिकार अधिनियम की धारा 12(1) (C) की धारा (2) के विषय पर बहुत विवाद

हुआ। इस धारानुसार निजी गैर-अनुदानित मान्यता प्राप्त स्कूलों को 25 प्रतिशत सीटों पर अनुसूचित जाति, जनजाति, सीमित आय के परिवारों से आने वाले बच्चों व अन्य पिछड़े कमजोर वर्ग के बच्चों को दाखिला देने के लिए उपबंध किया गया। निःशुल्क व अनिवार्य बाल शिक्षा कानून के अंतर्गत यह स्पष्ट किया गया कि पच्चीस फ्रीसदी आरक्षित कोटे से जिन बच्चों का प्रवेश निजी स्कूलों में होगा उन बच्चों के शुल्क की प्रतिपूर्ति सरकार, सरकारी स्कूलों में पढ़ने वाले बच्चों पर प्रतिवर्ष जितना व्यय होता है और जो भी कम है, उसके अनुसार करेगी। निजी स्कूल के मालिकों के अनुसार इस उपबंध द्वारा उनके स्कूल प्रशासन को चलाने के अधिकार पर बाधा आती है।

1. स्कूलों का स्तरीकरण— सामाजिक विषमता का प्रतिरूप

देश के सामाजिक वर्गीकरण के साथ-साथ हमारे यहाँ स्कूलों का भी वर्गीकरण है। इस स्तरीकरण के अनुसार साधन संपन्न वर्ग के बच्चे ज्यादा शुल्क वाले महँगे स्कूलों में पढ़ते हैं और गरीब और निम्न वर्ग के बच्चे सामान्य और कम शुल्क वाले स्कूलों में पढ़ते हैं। यदि इनकी संख्या की बात की जाए तो कुल स्कूली विद्यार्थियों का करीब 80 प्रतिशत है। इसके चलते देश का सामाजिक विभाजन और भी बढ़ रहा है। सभी स्कूलों में न्यूनतम मानक लागू करना न केवल शिक्षा की गुणवत्ता बढ़ा सकता है, बल्कि शिक्षा व्यवस्था में मौजूद भेदभाव को मिटाने में भी सहायक हो सकता है। इस भेदभाव को मिटाने का उपाय यह है कि पढ़ोस के स्कूल के सिद्धांत को लागू किया जाए। इसके मुताबिक हर स्कूल को पढ़ोस के सभी बच्चों को दाखिला देना होगा।

ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना में शिक्षा क्षेत्र में सार्वजनिक निजी भागीदारी (पी.पी.पी.) के सिद्धांत को लागू करने की नीति बन चुकी है। आज 6-14 वर्ष की आयु समूह के लगभग 20 करोड़ बच्चों में से 4 करोड़ बच्चे निजी स्कूलों में हैं। निजी स्कूलों में ट्यूशन फ्रीस के अलावा अन्य कई प्रकार के शुल्क लिए जाते हैं, जिसमें कंप्यूटर, पिकनिक, डांस आदि शामिल हैं। यह सब और इन स्कूलों के अभिजात माहौल के अनुकूल कीमती पोशाकें गरीब बच्चे कहाँ से लाएँगे। (महरोत्रा एवं शर्मा, 2020, पृ. सं. 17-18)।

2. मुफ्त और अनिवार्य शिक्षा के बावजूद सरकारी स्कूलों में बच्चों के नामांकन में हो रही कमी

मुफ्त में शिक्षा देने के बावजूद सरकारी स्कूलों के प्रति बच्चों का रुझान कम होता जा रहा है। जबकि, अपेक्षाकृत महँगे निजी स्कूलों में बच्चों की संख्या बढ़ रही है। गैर-सरकारी संगठन 'प्रथम' की ओर से जारी एन्युअल स्टेट्स ऑफ़ एजुकेशन रिपोर्ट में इस बात का खुलासा हुआ है। इस रिपोर्ट के मुताबिक, 2018 में चार साल की आयु वाली 60.3 फ्रीसदी लड़कियाँ और 55.7 फ्रीसदी लड़के सरकारी प्री-स्कूलों में पढ़ रहे थे। महज एक वर्ष में यह संख्या घटकर क्रमशः 56.8 फ्रीसदी और 50.4 फ्रीसदी रह गयी। इसी तरह आठ वर्ष की आयु वर्ग में 2018 में 68 फ्रीसदी लड़कियाँ और 59.6 फ्रीसदी लड़के सरकारी स्कूलों में पढ़ रहे थे। 2019 में यह संख्या घट कर क्रमशः 61 फ्रीसदी और 52 फ्रीसदी रह गई। सरकारी स्कूल मुफ्त शिक्षा देते हैं, जबकि निजी स्कूल शुल्क वसूलते हैं। इसके बावजूद निजी स्कूलों में छात्र-छात्राओं की संख्या बढ़ रही है। (हिन्दुस्तान, पृ. 16)।

शिक्षा का अधिकार (आर.टी.ई.) का यह पहलू लाभदायक हो सकता है कि निजी स्कूल कुछ प्रतिशत बच्चे गरीब वर्ग से अवश्य लें और उन्हें निःशुल्क शिक्षा दें। आखिर भारत में ही निजी स्कूलों का चलन क्यों है और क्यों अभिभावक ऐसे स्कूलों में अपने बच्चों को पढ़ाना पसंद करते हैं? (सानू, 2017)

संयुक्त राष्ट्र द्वारा स्वीकृत सतत विकास लक्ष्य (4) के अंतर्गत सभी बच्चों को 2030 तक निःशुल्क और अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा माध्यमिक शिक्षा स्तर तक उपलब्ध कराने पर लगभग सभी देश सहमत हैं। शिक्षा में अग्रणी अनेक राष्ट्र अब सभी बच्चों को कक्षा 12 की शिक्षा देने के लक्ष्य तक पहुँच चुके हैं या पहुँचने की तैयारी कर रहे हैं। शिक्षा अधिकार अधिनियम के अनुच्छेद 12(1)(C) में 25 प्रतिशत सीटें पिछड़े और वंचित वर्ग के बच्चों के लिए आरक्षित रखी गई हैं। यह नियम सरकारी के साथ ही निजी स्कूलों पर भी लागू किया गया। अल्पसंख्यक स्कूल को इससे छूट मिली। निजी स्कूलों ने इससे निजात पाने के लिए सभी प्रकार के उपाय किए। वे न्यायालय में गए। अभी भी उनमें से अनेक अपने-अपने ढंग से इसे कमजोर करने में लगे हुए हैं। यह स्वाभाविक ही है कि जिन बच्चों ने कक्षा 8 तक जिस निजी स्कूल में शिक्षा पाई वे कक्षा 9 में भी उसी स्कूल में पढ़ना चाहेंगे, मगर क्या ये संभव हो पाएगा? क्या वे सरकारी स्कूलों में जाने को बाध्य होंगे और क्या उन्हें वहाँ प्रवेश मिल जाएगा? स्कूल से हटाए या निकाले जाने के बाद इन बच्चों पर जो मानसिक और सांस्कृतिक तनाव आयेगा, उसकी ज़िम्मेदारी किसकी होगी? इसका समाधान शीघ्र निकाले जाने की आवश्यकता होगी।

कमज़ोर वर्ग के बच्चे और उनके माता-पिता निजी स्कूलों की फ़ीस देने में सक्षम नहीं होंगे और इस प्रकार या तो वे स्कूल छोड़ देंगे या फिर सरकारी स्कूलों में जाकर अत्यंत क्षीण मनोबल से पढ़ेंगे। सभी जानते हैं कि सरकारी और निजी स्कूलों में बेटी स्कूल शिक्षा समाज में एक नए प्रकार का वर्गभेद पैदा कर चुकी है। यह वर्ष-प्रतिवर्ष बढ़ता ही जा रहा है। वर्तमान शिक्षा व्यवस्था में इसे कम किए जाने की कोई संभावना दिखाई नहीं देती। वर्तमान स्थिति में वंचित वर्ग के बच्चों को आर.टी.ई. एक्ट के प्रावधान और सुविधाएँ हर हालत में कक्षा 12 तक मिलनी चाहिए। यही नहीं, उन्हें यह आश्वासन भी अभी से मिलना चाहिए कि इनमें से जो उच्च शिक्षा के लिए योग्य पाए जाएँगे उन्हें निराश नहीं होना पड़ेगा। उनकी शिक्षा निर्बाध रूप से जारी रहेगी। इस समय आर.टी.ई. एक्ट में आवश्यक परिवर्तन करने के लिए अध्यादेश लाकर वंचित वर्ग के इन बच्चों को इस संबंध में आश्वस्त किया जा सकता है। असर की रिपोर्ट बताती है कि 2008 में कक्षा 8 के 84.8 प्रतिशत विद्यार्थी कक्षा 2 की पुस्तक पढ़ सकते थे, पर अब 10 वर्ष बाद यह प्रतिशत 72.8 है। देश की युवा शक्ति और बौद्धिक क्षमता के इतने क्षय की क्या कोई भी देश अनदेखी कर सकता है? सरकारी स्कूलों की गुणवत्ता लगातार नीचे ही जा रही है। सबसे महत्वपूर्ण बात तो यह है कि जब 25 फ़ीसदी प्रवेश पाए बच्चे कक्षा 8 के बाद निजी स्कूलों से निकाल दिए जाएँगे तब वे किसी भी सभ्य समाज में कैसे स्वीकृत हो सकेंगे?... उच्च शिक्षा में गुणवत्ता बढ़ाने के प्रयास अधूरे ही रहेंगे यदि कक्षा 8 के पहले की शिक्षा की गुणवत्ता लगातार गिरती ही जाएगी।

यह सामान्य समझ है, जो दुर्भाग्य से नीति-निर्धारकों के विश्लेषण में स्थान नहीं पाती (राजपूत, 2019)।

3. समावेशिता की सार्थकता समान स्कूल प्रणाली की प्राथमिकता में संभव

कोठारी शिक्षा आयोग (1964–1966) द्वारा अनुशंसित पड़ोसी स्कूल की अवधारणा पर आधारित समान स्कूल प्रणाली की ओर बढ़ने की बात कही गई। इस आयोग ने कहा था कि पूर्व-प्राथमिक स्तर से लेकर उच्च शिक्षा तक उम्दा गुणवत्ता की शिक्षा देने के लिए जरूरी है कि देश के सकल राष्ट्रीय उत्पाद का कम से कम 6 प्रतिशत शिक्षा पर खर्च किया जाए। इसके बावजूद सन् 1991 की आर्थिक नीति के चलते अगले 16 सालों में सकल राष्ट्रीय उत्पाद के प्रतिशत के रूप में शिक्षा पर किया जाने वाला खर्च लगातार घटाया गया (सद्रोपाल, 2008, पृ. 4)। समान स्कूल व्यवस्था एक ऐसा कारगर औजार है जो चौदह वर्ष की आयु तक के सभी बच्चों को शिक्षा उपलब्ध कराने का संविधान निर्माताओं द्वारा देखा गया सपना पूरा करा सकता था। अगर समान स्कूल व्यवस्था भारतीय शिक्षा का एकमात्र आधार बन जाती है तो अभिजात वर्ग की सत्ता को पोषित करने वाले पब्लिक स्कूल के साथ ही अन्य समृद्ध स्कूलों की भूमिका ही समाप्त हो जाती। (सद्रोपाल, 2000, पृ. 122)।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 स्कूली शिक्षा प्रणाली के प्राथमिक लक्ष्यों में इस बात की सुनिश्चितता पर बल देती है कि बच्चों का स्कूल में नामांकन हो और उन्हें नियमित रूप से विद्यालय भेजा जाए। सर्व शिक्षा अभियान वर्तमान (समग्र शिक्षा) और शिक्षा का अधिकार अधिनियम जैसी पहल के माध्यम से भारत ने हाल के वर्षों में प्राथमिक शिक्षा में लगभग

सभी बच्चों का नामांकन प्राप्त करने में उल्लेखनीय प्रगति की है। हालाँकि, बाद के आँकड़े बच्चों के स्कूली व्यवस्था में ठहराव संबंधी कुछ गंभीर मुद्दों की ओर इशारा करते हैं। कक्षा 6 से 8 तक का सकल नामांकन दर (जी.ई.आर.) 90.9 प्रतिशत है, जबकि कक्षा 9–10 और 11–12 के लिए यह क्रमशः 79.3 प्रतिशत और 56.5 प्रतिशत है। यह आँकड़े इस बात को प्रदर्शित करते हैं कि किस प्रकार से कक्षा 5 और विशेष रूप से कक्षा 8 के बाद नामांकित छात्रों का एक महत्वपूर्ण अनुपात शिक्षा प्रणाली से बाहर हो जाता है। वर्ष 2017–2018 में नेशनल सैपल सर्वे ऑर्गेनाइजेशन (एन.एस.एस.ओ.) के 75वें राउंड हाउसहोल्ड सर्वे के अनुसार, 6 से 17 वर्ष के बीच की उम्र के विद्यालय न जाने वाले बच्चों की संख्या 3.22 करोड़ है। इस चिंता को समझते हुए 2030 तक प्री-स्कूल से माध्यमिक स्तर में 100 प्रतिशत सकल नामांकन अनुपात प्राप्त करने और भविष्य में विद्यार्थियों का ड्रॉपआउट दर भी कम हो इस लक्ष्य की दृष्टि से आगे बढ़ने की बात राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में कही गई है। क्योंकि स्कूलों में कक्षा 1 से लेकर कक्षा 12 तक लगातार नामांकन में कमी आ रही है। नामांकन में यह गिरावट सामाजिक-आर्थिक रूप से वंचित समूहों (सामाजिक एवं आर्थिक रूप से अलाभांवित समूह) में अधिक है और विशेषकर सामाजिक-आर्थिक रूप से वंचित समूह (एस.ई.डी. जी.) की महिला विद्यार्थियों के संदर्भ में यह और अधिक स्पष्ट है। आँकड़ों के अनुसार, भारत के 28 प्रतिशत सरकारी प्राथमिक स्कूलों और 14.8 प्रतिशत उच्चतर प्राथमिक स्कूलों में 30 से भी कम विद्यार्थी पढ़ते हैं। कक्षा 1 से 8 तक के स्कूलों में प्रतिकक्षा

औसतन 14 विद्यार्थी हैं, जबकि बहुत से विद्यालयों में तो यह औसत मात्र 6 से कम है। वर्ष 2016–2017 में 1,08,017 विद्यालय एकल शिक्षक द्वारा आयोजित थे। इनमें से यदि देखा जाए तो अधिकतम (85,743) कक्षा 1 से 5 वाले प्राथमिक स्कूल थे। *राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020* में निजी और सार्वजनिक स्कूलों सहित सभी स्कूलों के बीच आपसी सहयोगात्मक तालमेल बढ़ाने के लिए देशभर में एक निजी और एक सार्वजनिक विद्यालय को परस्पर संबद्ध करने की बात कही गई है। इस नीति का झुकाव भी शिक्षा व्यवस्था में सकारात्मक बदलाव एवं गुणवत्तापूर्ण शिक्षा की उम्मीद, निजीकरण से ही संभव होगी, ऐसी परिकल्पना की गई है। यहाँ तक कि गुणवत्तापूर्ण शिक्षा के लिए निजी परोपकारी प्रयासों को प्रोत्साहित करने की बात को बार-बार दुहराया भी गया है (*राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020*, पृ. सं. 14–50)।

निष्कर्ष

निःशुल्क और अनिवार्य बाल शिक्षा का अधिकार अधिनियम 2009 की धारा 12(1)(C) की धारा (2) के उपखंड (iv) में सामाजिक एवं आर्थिक रूप से कमजोर पृष्ठभूमि के बच्चों के लिए निजी गैर-अनुदानित मान्यता प्राप्त स्कूलों में प्रारंभिक शिक्षा पूरी करने तक निःशुल्क शिक्षा के प्रावधान को सुनिश्चित किया गया। लेकिन इस बात को भी

रेखांकित करने की ज़रूरत है कि ये बच्चे आठवीं की शिक्षा पूरी करने के पश्चात् कहाँ जाएँगे? दूसरी बात यह है कि इन बच्चों को निजी स्कूलों से निकाल दिया जाएगा तो सभ्य समाज के लोग इन बच्चों को किस भावना के साथ स्वीकार करेंगे? ये बच्चे आर्थिक रूप से इतने सक्षम नहीं हैं कि इन महंगे निजी स्कूलों की फ़ीस देकर आठवीं के बाद की पढ़ाई जारी रख सकें। यदि हम इस अधिनियम को अपने अंतर्गम से टटोलें तो यह प्रतीत होता है कि आर.टी.ई. अधिनियम का 25 फ़ीसदी प्रावधान तो थोड़ा-सा ज्ञान देकर आजीविका की अनंत संभावनाओं का अवकलन करता है। क्योंकि रोज़गार के अवसरों का सृजन तो माध्यमिक या परास्नातक स्तर की शिक्षा के उपरांत सुलभ होते हैं। एक प्रकार से कहें तो इस अधिनियम ने तो बच्चों को किसी पुस्तक के आवरण पृष्ठ को तो देखने एवं पढ़ने को मौका दिया, लेकिन पूरी पुस्तक को पढ़ने व समझने के अवसरों से वंचित भी कर दिया। लिहाज़ा इन परिस्थितियों और बच्चों के हितों को ध्यान में रखते हुए नीति-निर्माताओं को पूर्व-प्राथमिक से परास्नातक तक मुफ़्त एवं अनिवार्य शिक्षा की व्यवस्था करनी चाहिए। सरकार को आठवीं तक ही नहीं बल्कि पूर्व-प्राथमिक से परास्नातक तक सभी बच्चों की शिक्षा मुफ़्त एवं अनिवार्य करने के लिए कदम बढ़ाना चाहिए।

संदर्भ

- कुमार, प्रवीण. 2013. सामाजिक क्षेत्र का बदलता स्वरूप : शिक्षा एवं स्वास्थ्य नीति के संदर्भ में. वासुकीनाथ चौधरी और युवराज कुमार (संपा.). *आज का भारत*. प्रथम संस्करण, पृ. 121. ओरियंट ब्लैक स्विन, नयी दिल्ली.
- गुप्ता, एस. और जे.सी. अग्रवाल. 2014. *भारत में प्रारंभिक शिक्षा स्वतंत्रता से पूर्व तथा पश्चात्*. पृ. सं. 92–93. शिप्रा पब्लिकेशन. नयी दिल्ली.

गुप्ता, एस.पी. और अलका गुप्ता. 2012. *भारतीय शिक्षा का ताना-बाना*. पृ. 258. शारदा पुस्तक भवन, इलाहाबाद.

निःशुल्क और अनिवार्य बाल शिक्षा का अधिकार अधिनियम 2009. (2009 का अधिनियम संख्यांक 35).

महरोत्रा, ममता और महेश शर्मा. 2020. *शिक्षा का अधिकार*. पृ. सं. 17–18. प्रभात पेपर बैक्स, नयी दिल्ली.

मुफ्त शिक्षा के बावजूद घट रहे सरकारी स्कूलों में बच्चे. जनवरी 17, 2020. *हिन्दुस्तान*. पृ. 16. नयी दिल्ली.

राजपूत, जगमोहन सिंह. फरवरी 8, 2019. विस्तार चाहता शिक्षा अधिकार कानून. *दैनिक जागरण*. पृ. 8. राष्ट्रीय संस्करण, नयी दिल्ली.

शिक्षा मंत्रालय. 2020. *राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020*. पृ. सं. 14–50. शिक्षा मंत्रालय, भारत सरकार, नयी दिल्ली.

सद्गोपाल, अनिल. 2000. बस्ते का बोझ और गरीब बच्चे. *शिक्षा में बदलाव का सवाल*. पृ. 122. ग्रंथ शिल्पी, दिल्ली.

सद्गोपाल, अनिल. 2008. नवउदारवाद और शिक्षा का अधिकार. *परिप्रेक्ष्य, शैक्षिक योजना और प्रशासन का सामाजिक-आर्थिक संदर्भ*. वर्ष 15. अंक 3. पृ. 4. नीपा, नयी दिल्ली.

सानू, संक्रांत. मई 30, 2017. खामियों भरा शिक्षा का अधिकार कानून. *दैनिक जागरण*. पृ. 8. राष्ट्रीय संस्करण, नयी दिल्ली.